अध्याय 2

विश्व के प्रमुख दर्शन

मानव सभ्यता के उदय के साथ ही सोचना, विचारना और चिन्तन करना मनुष्य का स्वभाव रहा है। इस स्वाभाविक मानसिक प्रक्रिया से मनुष्य के मन में लगातार यह विचार आता रहा है कि मैं क्या हूँ? कहाँ से आया हूँ? मेरा भविष्य क्या है? मृत्यु के बाद मैं कहाँ जाऊँगा? विचारों की इस प्रक्रिया ने धर्म, मजहब, पंथों को जन्म दिया और इसने मनुष्य के जीवन–दर्शन को विकसित करने में मदद की। इस प्रकार धर्म तथा दर्शन दोनों संयुक्त रहे हैं। हमारा जीवन व्यवहार धर्म से शासित है। धर्म का स्वरूप आचार है, उसे मार्गदर्शन दर्शन से प्राप्त होता है। दर्शन के द्वारा कुछ तत्त्व या सिद्धान्त प्रतिपादित होते हैं। धर्म उनकी क्रियान्विति करता है तथा हेय को छोड़ने का आग्रह करता है और उपादेय को स्वीकार करने की प्रेरणा देता है।

मनुष्य के चिन्तन की यह प्रक्रिया सम्पूर्ण विश्व के मानव समुदाय में व्याप्त रही है, फलस्वरूप विश्व में समय–समय पर विभिन्न उपासना, पंथों, धर्मों का उदय हुआ। इन धर्मों की उपासना पद्धतियाँ अलग–अलग हैं, लेकिन सब का लक्ष्य ईश्वर तक पहुँचकर आत्मकल्याण करना ही है। ईश्वर तक पहुँचकर आत्मकल्याण करना अथवा मोक्ष प्राप्त करने के लिए धर्म का दार्शनिक स्वरूप तथा उसका चिन्तन साधक या बाधक तत्त्वों की व्याख्या करता है। तत्त्वों की यही व्याख्या, चिन्तन अथवा मीमांसा ने विश्व के सभी धर्मों के दर्शनों को विकसित किया है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को सद्नागरिक बनने के लिये विश्व के प्रमुख धर्मों के दर्शन पक्ष की जानकारी आवश्यक है। विश्व के प्रमुख दार्शनिक चिन्तनों में वैदिक दर्शन, जैन दर्शन, बौद्ध दर्शन, इस्लामिक दर्शन, इसाई व पारसी दर्शन मुख्य हैं।

1. वैदिक दर्शन

वैदिक दर्शन भारत के सबसे प्राचीन दर्शनों में सबसे प्रमुख दर्शन है। यह वैदिक दर्शन वैदिक साहित्य में उपलब्ध होता है। वैदिक साहित्य के भाग हैं यथा– वेद, ब्राह्मण, संहिता, आरण्यक, उपनिषद् (वेदान्त) तथा वेदांग इनका सामूहिक नाम वैदिक साहित्य है। वेद विश्व के सबसे प्राचीन ग्रंथ है। वेद चार हैं– 1. ऋग्वेद 2. यजुर्वेद 3. सामवेद 4. अथर्ववेद। ऋग्वेद इनमें सबसे प्राचीन और विश्व का प्रथम ग्रंथ माना जाता है।

ऋग्वेद में प्रधानरूप से धर्मपरक सूक्त हैं। इसमें धार्मिक विचारधारा का विकास एवं सृष्टि सम्बंधी और दार्शनिक सूक्त भी हैं। देवों की स्तुति से सम्बंधित सूक्त भी हैं। यजुर्वेद और सामवेद में कर्मकाण्डपरक धर्म के उद्देश्य को बताया गया है। वैदिक युग के आरंभ में यहाँ सरल उपासना का कर्म था। सामवेद में यज्ञों में गेय मंत्रों का संकलन है। अथर्ववेद में अभिचारपरक मंत्रों का संग्रह है।

ब्राह्मण ग्रंथों में उन अनुष्ठानों का विशद रूप से वर्णन है, जिनमें वैदिक मंत्रों को प्रयुक्त किया गया है। अनुष्ठानों के अतिरिक्त इनमें वेद मंत्रों के अभिप्राय व विनियोग की विधि का भी वर्णन है।

वैदिक ऋषि आध्यात्मिक, दार्शनिक व पारलौकिक विषयों पर भी चिन्तन किया करते थे। आत्मा क्या है?सृष्टि की उत्पति किस प्रकार हुई?सृष्टि किन तत्त्वों से बनी ?सृष्टि का कर्त्ता व नियामक कौन है? जड़ प्रकृति से भिन्न जो चेतन सत्ता है, उसका क्या स्वरूप है?इस प्रकार के सभी प्रश्नों का दार्शनिक चिन्तन व विवरण वैदिक साहित्य में मिलता है। ब्राह्मण ग्रंथ आरण्यकों व उपनिषदों की संख्या भी कई है।

इस प्रकार वैदिक साहित्य प्रधानतया धार्मिक साहित्य है जो दार्शनिक चिन्तन का प्रतिनिधित्व करता है। वैदिक युग में लोग विविध देव शक्तिओं की उपासना करते थे। इनमें इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, यम आदि प्रमुख हैं। इन्हें संतुष्ट करने के लिए विविध अनुष्ठानों का अनुसरण किया जाता था। संसार का स्रष्टा, पालक व संहारक एक ईश्वर है। प्राकृतिक शक्तियों का आधार मानकर इन अधिष्ठाता देवताओं की उपासना करने का विशेष प्रचलन था। वेदों में वर्णित बहुसंख्यक देवी–देवताओं, प्राकृतिक शक्तियों व सत्ताओं के मूर्तरूप हैं। वेदों में कतिपय देवता ऐसे भी हैं, जिन्हें भाव स्वरूप समझा जा सकता है। मनुष्य में श्रद्धा, क्रोध, आदि की जो विविध भावनाएँ है उन्हें भी वेदों में देवी–देवता स्वरूप माना गया है। इन देवी –देवताओं की पूजा के लिये वैदिक युग के लोग अनेक विधियज्ञों का अनुष्ठान करते थे। वैदिक युग में देवता प्राकृतिक शक्तियों के रूप में थे, अतः उनका मूर्तियों वाला कोई स्वरूप नहीं था। दार्शनिक चिन्तन का मूलाधार भी यही था।

वैदिक दर्शन के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद के प्रथम मण्डल में कहा गया हैं कि सत्य (ईश्वर या परमसत्य) एक ही है किन्तु विद्वान उसे अनेक नामों से पुकारते हैं। उपनिषदों के अनुसार संसार में व्याप्त ब्रह्म और व्यक्ति में व्याप्त आत्मा वस्तुतः एक ही है। व्यक्ति के जीवन का उद्देश्य इसी एकत्व की अनुभूति करना है। इसी एकत्व की अनुभूति से व्यक्ति स्थाई आनन्द (सच्चिदानन्द) को प्राप्त करता है। इस मान्यता ने सम्पूर्ण मानव जाति को सहिष्णुता का संदेश दिया है। वैदिक दर्शन में मनुष्य के जीवन को आध्यात्मिक और भौतिक दृष्टि से उन्नत करने के लिए चार पुरुषार्थों की व्यवस्था की गई है। ये पुरुषार्थ हैं– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। धर्म का तात्पर्य कर्त्तव्यपालन और सदाचरण से है। अर्थ (धन) जीवन में भौतिक समृद्धि प्राप्त करने का साधन है। शारीरिक सुखों की प्राप्ति काम पुरुषार्थ से होती है। मनुष्य जीवन का परम लक्ष्य मोक्ष है। चारों पुरुषार्थों के समुचित समन्वय से ही व्यक्ति और समाज दोनों का विकास होता है।

वैदिक दर्शन के अनुसार कर्म के आधार पर पुनर्जन्म होता है। इससे व्यक्ति उत्तम कार्य सम्पादित कर जीवन को श्रेष्ठ बना सकता है। वैदिक दर्शन में ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की बात कही गई है। इससे व्यक्ति का चरित्र संकीर्णकर्ताओं के बंधन से मुक्त होकर समस्त पृथ्वी को ही अपना परिवार समझने लगता है। वैदिक दर्शन में स्तुति और यज्ञ के माध्यम से अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु तथा आकाश जैसे प्राकृतिक तत्त्वों को स्वच्छ व सुरक्षित रखने की प्रेरणा दी गई है।

उपनिषदों में त्यागपूर्वक उपभोग करने का उल्लेख है। इससे व्यक्ति लोभ व मोह से दूर रहता हुआ अपना कर्त्तव्य पालन करता है। वैदिक दर्शन में दूसरों की सेवा करने को धर्म और दूसरों को दुःख देने को पाप कहा गया है।

इस प्रकार वेदों का दार्शनिक चिन्तन सम्पूर्ण विश्व में सौमनस्य, सदाचार, सहयोग तथा समन्वय की प्रेरणा देता है।

2. जैन दर्शन

जैन साहित्य के अनुसार जैन दर्शन का प्रारम्भ बहुत प्राचीन काल में हुआ था। जैन दार्शनिक परम्परा वैदिक परम्परा के ही समकालीन एक आंदोलन माना जाता है। इस दर्शन के विकास में तीर्थंकरों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। ऐसा माना जाता है कि महावीर के पहले 23 जैन तीर्थंकर और हुए थे। पहले तीर्थंकर ऋषभदेव या आदिनाथ थे तथा तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ थे। चौबीसवें तीर्थंकर महावीर स्वामी का जन्म वैशाली के समीप कुण्डग्राम में, क्षत्रिय कुल में, 599 ई.पू. हुआ था इनके पिता का नाम सिद्धार्थ और माता का नाम त्रिशला था। त्रिशला लिच्छवी गणराज्य के राजा चेटक की बहन थी। महावीर का बचपन का नाम वर्धमान था। वर्धमान को प्रारम्भ में ही क्षत्रियोचित शिक्षा दी गई थी। किन्तु वर्धमान का मन संसार में नहीं लगता था। उनके मन में विरक्ति के भाव पैदा हो गए थे। इसलिए 30 वर्ष की उम्र में, उनके माता–पिता के निधन के बाद इन्होंने सत्यज्ञान की खोज के लिए अपने बड़े भाई नन्दीवर्धन से आज्ञा लेकर घर छोड़ दिया और तपस्या करने लगे। इस तपस्या में उन्हें घोर कष्ट सहन करने पड़े। बिना वस्त्र तथा महिनों तक बिना खाये–पीये रहे। अन्त में, बारह वर्ष की कठोर तपस्या के बाद उन्हें कैवल्य ज्ञान की अनुभूति हुई। कैवल्य प्राप्त हो जाने पर महावीर को जिन (जीतने वाला), निर्ग्रन्थ (सन्देह मुक्त) तथा महावीर आदि नामों से पुकारा जाने लगा।

महावीर स्वामी

कैवल्य ज्ञान हो जाने पर महावीर ने जनता को जीवन का सही मार्ग दिखाने का कार्य प्रारम्भ किया। अपने विचारों का जनता में प्रचार करने के लिए वे स्थान–स्थान पर घूमने लगे। उनके इस प्रचार कार्य से मगध, काशी तथा कौशल आदि राज्यों में उनके विचारों का प्रसार हुआ।

उनकी सत्य वाणी से प्रभावित होकर कई लोग उनके अनुयायी बनने लगे। धीरे–धीरे उनके अनुयायियों की संख्या काफी हो गई। अन्त में इसी प्रकार अपने विचारों का प्रसार करते हुए पावापुरी (बिहार) में 527 ई.पू. में, 72 वर्ष की आयु में, महावीर का निर्वाण हुआ। अपने ज्ञान दीप को हमेशा जलाए रखने हेतु वे अपने पीछे चौदह हजार शिष्य छोड़ गए।

जैन शब्द 'जिन' शब्द से बना है। इसका शाब्दिक अर्थ 'विजेता' होता है। संसार की मोह–माया व इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त करना ही इस धर्म का एकमात्र उद्देश्य है।

मोक्ष प्राप्त करने के लिए महावीर स्वामी ने तीन उपाय बताए थे, जो आगे चलकर 'त्रिरत्न' कहलाए। जैन धर्म का दार्शनिक चिन्तन यहीं से आरंभ होता है–

I. सम्यक् ज्ञानः– इसका अर्थ पूर्ण और सच्चा ज्ञान होता है। महावीर ने बताया था कि सच्चे और पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति के लिए मनुष्यों को तीर्थंकरों के उपदेशों का अध्ययन व अनुसरण करना चाहिए।

II. सम्यक् दर्शन– इसका अर्थ है तीर्थंकरों में पूरी आस्था रखना। सच्चे ज्ञान को जीवन में उतारने के लिए प्रत्येक मनुष्य को तीर्थंकरों में पूरी आस्था और विश्वास रखना चाहिए।

III. सम्यक् चरित्रः– इसका अर्थ है मनुष्य अपनी इन्द्रियों को वश में रखकर ही सत्य ज्ञान को प्राप्त कर सकता है, अतः उसे इन्द्रियों पर संयम रखना चाहिए।

मोक्ष प्राप्ति के इन तीनों साधनों का पालन करने के लिए जैन दर्शन ने गृहस्थ लोगों के लिए पाँच मुख्य नियम (महाव्रत) बताए हैं जो निम्नलिखित हैं:–

(क) अहिंसा– अहिंसा महावीर की शिक्षा और जैन धर्म के सिद्धान्तों का मूलमंत्र है। अहिंसा का अर्थ प्राणी मात्र के प्रति दया, समानता और उपकार की भावना है। मन, वचन तथा कर्म से किसी के प्रति अहित की भावना नहीं रखना वास्तविक अहिंसा है। जैनधर्म में अहिंसा की सूक्ष्म से सूक्ष्म व्याख्या की गई है।

(ख) सत्य– अहिंसा के साथ सत्य वचन पर महावीर ने बहुत जोर दिया, क्योंकि बिना सत्य भाषण के अहिंसा का पालन नहीं हो सकता। अतः महावीर ने कहा था कि प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक परिस्थिति में सत्य ही बोलना चाहिए।

(ग) अस्तेय– अस्तेय का अर्थ, चोरी नहीं करना है। महावीर ने चोरी को अनैतिक कार्य बताया तथा इस दुर्गुण से हमेशा दूर रहने की शिक्षा दी।

(घ) अपरिग्रह– अपरिग्रह का अर्थ संग्रह नहीं करना होता है। महावीर के अनुसार जो व्यक्ति सांसारिक वस्तुओं का संग्रह नहीं रखता है, वह संसार के मायाजाल से दूर रहता है अर्थात् अपने पास उतना ही रखो जितने की आवश्यकता है, शेष को वांछित लोगों में बाँट दो।

(च) ब्रह्मचर्य– इन चारों बातों का पालन तब तक नहीं हो सकता, जब तक कि मनुष्य विषय–वासनाओं से दूर नहीं रहता । इसलिए महावीर ने जैन धर्म के तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के चारों उपायों में ब्रह्मचर्य का पाँचवाँ उपाय जोड़कर इन्हें त्रिरत्नों की प्राप्ति का साधन बताया।

महावीर कहते थे कि संसार के सुख–दुःख का कारण मनुष्य का अन्तःकरण है। यदि ऊपर बतलाए गए उपायों का मनुष्य पालन करे तो वह आत्मा पर विजय प्राप्त कर सकता है। आत्मा पर विजय प्राप्त करने से ही संसार की मोह–माया से मनुष्य को छुटकारा मिल सकता है।

तपस्या तथा उपासनाः– महावीर ने आत्मा को वश में करने तथा उपर्युक्त पाँच नियमों का पालन करने के प्रयत्न में तपस्या और उपवास पर सबसे अधिक बल दिया। उन्होंने दो प्रकार की तपस्या बताई– एक बाह्य तथा दूसरी आंतरिक। तपस्या में नम्रता, सेवा, स्वाध्याय, ध्यान आदि सम्मिलित हैं। बाह्य तपस्या करने से व्यक्ति में आन्तरिक तपस्या करने की क्षमता आती है और मानव में अच्छे विचारों का विकास होता है। महावीर ने तपस्या का सबसे सरल साधन उपवास बताया। इससे शरीर एवं आत्मा शुद्ध होती है और मनुष्य को मोक्ष प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त होता है।

महावीर आत्मा की अमरता में विश्वास करते थे। उनके अनुसार प्रकृति में परिवर्तन हो सकते हैं किन्तु आत्मा अजर–अमर है और सदैव एकसी बनी रहती है। मनुष्य के कर्मों के कारण पैदा होने वाली सांसारिक वासना के बंधनों से आत्मा का बार–बार आवागमन होता रहता है और जन्म–मरण का चक्र चलता रहता है। इसलिए महावीर स्वामी का कथन था कि यदि वासनाओं पर विजय प्राप्त कर ली जाए तो कर्मों के बन्धन नष्ट हो सकेंगे और जन्म मरण के चक्र से मुक्ति मिलेगी। महावीर की इस विचारधारा से अनुमान लगा सकते हैं कि जैन धर्म आत्मा की अमरता, पुनर्जन्म और कर्मवाद में विश्वास रखता है। महावीर की ये सभी शिक्षाएँ बड़ी सरल व सीधी थीं। साथ ही इन सभी बातों का उपदेश महावीर ने उस युग की जनता की भाषा अर्ध मागधी में किया। महावीर ने जातिवाद व छूआछूत का विरोध किया तथा नारी को पूरा सम्मान दिया। महावीर ने तत्कालीन हिंसा, कट्टरता व सामाजिक कुरीतियों का जमकर विरोध किया।

जैन दर्शन निवृत्तिमूलक है। इसके अनुसार सांसारिक जीवन में सुख नहीं है। अतः संसार का परित्याग कर कठोर तपस्या द्वारा मोक्ष प्राप्त करना चाहिए। मनुष्य के सारे सुख–दुःखों का कारण उसके

कर्म ही है। कर्म ही पुनर्जन्म का कारण है। उसे कर्मों के फल को भोगे बिना जन्म–मरण के चक्र से छुटकारा नहीं मिलता। जैन मतानुसार यह सृष्टि जीव व अजीव से निर्मित है। जीव चेतन है, अजीव अचेतन है। जीव व अजीव कर्म से बँधे रहते हैं। कर्म के बंधन को तोड़ना ही मोक्ष है।

जैन दर्शन में स्याद्वाद या अनेकान्तवाद, सहिष्णुता व समन्वय का मूल मंत्र है। महावीर ने कहा है कि किसी बात को एक ही पक्ष से मत देखो। उस पर एक तरह से ही विचार मत करो। तुम जो कहते हो वह सत्य हो सकता है। किन्तु दूसरे जो कहते हैं वह भी सत्य हो सकता है। आज संसार में जो तनाव और द्वन्द्व है, वह दूसरों के दृष्टिकोण को न समझने के कारण ही है। अतः इस सिद्धान्त से विचार समन्वय संभव है। जैन दर्शन के अनुसार आत्मा अजर–अमर है। जीव ही आत्मा है। कण–कण में जीवात्मा का निवास है। इस प्रकार जैन धर्म का दार्शनिक चिन्तन मूलतः आत्म कल्याण की ओर प्रवृत्त होने की ही प्रेरणा देता है।

3. बौद्ध दर्शन

महावीर स्वामी की तरह ही छठी शताब्दी ईसा पूर्व भारत में एक दूसरी महान् विभूति का जन्म हुआ। इस विभूति ने भी महावीर की तरह ही उस युग में फैली धर्म ग्लानि, रुढ़िवाद तथा सामाजिक जटिलता के विरुद्ध आवाज उठाई और भारत की जनता को जीवन का सही मार्ग बताया। यह विभूति और कोई नहीं, महात्मा बुद्ध थे।

महात्मा बुद्ध का जन्म 563 ई.पू. में उत्तरी बिहार स्थित कपिलवस्तु गणराज्य के शाक्यवंशीय क्षत्रिय कुल में हुआ था।

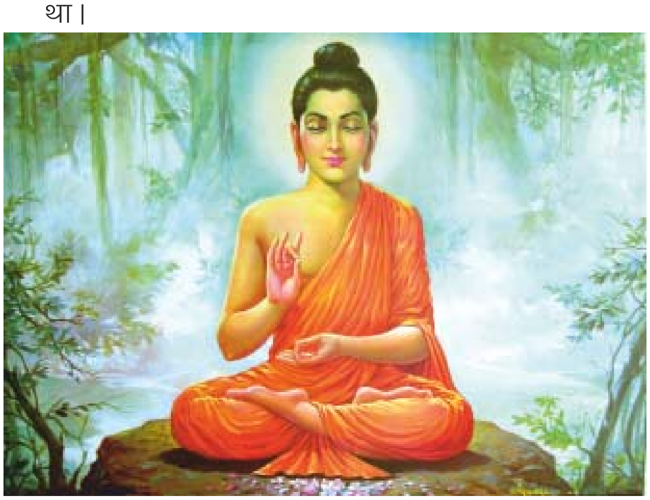

गौतम बुद्ध

इनका बचपन का नाम सिद्धार्थ था। अपने कुल का गौतम गौत्र होने के कारण उन्हें 'गौतम'' भी कहा जाता है। इनके पिता का नाम शुद्धोधन एवं माता का नाम मायादेवी था। जब माया देवी अपने पिता के यहाँ जा रही थी, तब मार्ग में ही लुम्बिनीवन में बुद्ध का जन्म हुआ। दुर्भाग्यवश इनके जन्म के सात दिन बाद ही इनकी माता का स्वर्गवास हो गया। अतः उनका लालन–पालन उनकी विमाता और मौसी प्रजापति गौतमी ने किया।

बाल्यावस्था में ही बुद्ध विचारशील एवं एकान्तप्रिय थे। वे बड़े करुणावान थे। संसार में लोगों को कष्टों में देखकर उनका हृदय दया से भर जाता था। यद्यपि उनके पिता ने सभी प्रकार से क्षत्रियोचित शिक्षा दीक्षा उन्हें दिलाई थी और उसमें वे प्रवीण भी हो गए थे, फिर भी बुद्ध का मन सांसारिक बातों में नहीं लगता था। वे इनकी ओर से उदास रहते थे। पुत्र की ऐसी मनोवृत्ति देखकर पिता शुद्धोधन ने सोलह वर्ष की उम्र में ही सिद्धार्थ का यशोधरा नाम की सुन्दर राजकुमारी से विवाह कर दिया। लगभग 10 वर्ष तक गृहस्थी का जीवन व्यतीत कर लेने पर भी सिद्धार्थ के मन में इस जीवन के सुख–दुःख की समस्याएँ बराबर उलझन पैदा करती रहीं। सिद्धार्थ का वैरागी मन इस संसार में नहीं लगा। इस वैराग्य भावना के फलस्वरूप एक दिन अपने पुत्र, पत्नी, पिता और सम्पूर्ण राज्य वैभव को छोड़कर वे ज्ञान की खोज में निकल गए। जीवन की इस घटना को बौद्ध साहित्य में 'महाभिनिष्क्रमण' कहा जाता है।

महाभिनिष्क्रमण के उपरान्त वे लगातार सात वर्ष तक संन्यासी जीवन व्यतीत करते रहे। सबसे पहले वे वैशाली के 'आलार कालाम' तपस्वी के पास ज्ञानार्जन हेतु गए, किन्तु वहाँ उनकी ज्ञान–पिपासा शांत नहीं हो सकी। अतः वे राजगृह में ब्राह्मण आचार्य 'उद्रक रामपुत' के पास गये किन्तु यह आचार्य भी उन्हें संतोष नहीं दे सका। तब सिद्धार्थ वहाँ से चले और उरूवेला वन में पहुँचे। वहाँ वे कौडिण्य आदि अपने पाँच साथियों के साथ उरूवेला के निकट निरंजना नदी के तट पर कठोर तपस्या करने लगे। कठोर तपस्या के कारण उनका शरीर सूख कर काँटा हो गया। फिर भी उनका उद्देश्य सिद्ध नहीं हुआ। तब उन्होंने तपस्या छोड़कर आहार करने का निश्चय किया। गौतम में यह परिवर्तन देखकर उनके साथी उन्हें छोड़कर चले गए किन्तु इससे वे विचलित नहीं हुए। उन्होंने ध्यान लगाने का निश्चय किया। वे वहीं एक पीपल के वृक्ष के नीचे ध्यान की अवस्था में बैठ गए। सात दिन तक ध्यान–मग्न रहने के पश्चात् वैशाख माह की पूर्णिमा के दिन उन्हें आन्तरिक ज्ञान का बोध हुआ और तभी से वे 'बुद्ध' कहे जाने लगे। पीपल का वह वृक्ष जिसके नीचे सिद्धार्थ को बोध लाभ (ज्ञान प्राप्त) हुआ था, वह 'बोधिवृक्ष' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

ज्ञान प्राप्त होने के पश्चात् सबसे पहले ''बौद्ध गया' में ही बुद्ध ने अपने ज्ञान का उपदेश 'तपस्सु' और 'मल्लिक' नामक दो बन्जारों को दिया। इसके बाद गौतम बुद्ध अपने ज्ञान एवं विचारों को जनसाधारण तक पहुँचाने के उद्देश्य से निकल पड़े और सारनाथ पहुँचे। वहीं उन्होंने अपने उन पाँचों साथियों से सम्पर्क स्थापित किया, जो उन्हें छोड़कर चले गये थे। बुद्ध ने उन्हें अपने ज्ञान की धर्म के रूप में दीक्षा दी। यह घटना बौद्ध धर्म में 'धर्मचक्रप्रवर्तन' कहलाती है। अन्त में 80 वर्ष की आयु में 483 ई.पू. में गोरखपुर के समीप कुशीनगर नामक स्थान पर गौतम बुद्ध ने अपना शरीर त्याग दिया। बुद्ध के शरीर त्यागने की घटना को 'महापरिनिर्वाण' कहते हैं।

महावीर स्वामी की तरह ही महात्मा बुद्ध भी मानवता के शिक्षक थे। उन्होंने अपने उपदेशों से दुःख से पीड़ित लोगों को मुक्त कर सतत शांति प्राप्त हो, ऐसा मार्ग बताने का प्रयत्न किया। दार्शनिक चिंतन का आधार चार आर्य सत्य है–

i. संसार दुःखमय हैः संसार में जन्म–मरण, संयोग, वियोग, लाभ–हानि आदि सभी दुःख ही दुःख है।

ii. दुःख का कारण : सभी प्रकार के दुःखों का कारण तृष्णा (लालसा) या वासना है।

iii. दुःख दमन : तृष्णा के निवारण से या लालसा के दमन से दुःख का निराकरण हो सकता है।

iv. दुःख निरोध मार्गः दुःखों पर विजय प्राप्त करने का मार्ग है और वह अष्टांगिक मार्ग या मध्यम मार्ग है।

महात्मा बुद्ध ने बताया था कि सांसारिक वस्तुओं को भोगने की तृष्णा ही आत्मा को जन्म–मरण के बंधन में जकड़े रखती है। अतः निर्वाण (मोक्ष) प्राप्ति के लिए तृष्णा को मिटा देना आवश्यक है। इसके लिए मनुष्य को अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। अष्टांगिक मार्ग जीवन–यापन का बीच का रास्ता है, इसीलिए इसको मध्यम मार्ग भी कहा गया है। इसमें निर्वाण प्राप्ति के लिए न तो कठोर तपस्या को उचित बताया है और ना ही सांसारिक भोग विलास में डूबा रहना उचित बताया है। अष्टांगिक मार्ग के आठ उपाय निम्नलिखित हैंः–

I. सम्यक् दृष्टि–सत्य–असत्य, पाप–पुण्य में भेद करने से ही इन चार आर्य सत्यों पर विश्वास पैदा होता है।

ii. सम्यक् संकल्प– दुःख के कारण तृष्णा से दूर रहने का दृढ़ विचार रखो।

iii. सम्यक् वाक्– (शुद्ध वचन)– नित्य सत्य और मीठी वाणी बोलो।

iv. सम्यक् कर्मान्तः– (शुद्ध कर्म) :– हमेशा सच्चे और अच्छे काम करो।

v. सम्यक् आजीव (शुद्ध आजीविका)– अपनी आजीविका के लिए पवित्र तरीके अपनाओ।

vi. सम्यक् प्रयत्नः– शरीर को अच्छे कार्यों में लगाने के लिये उचित परिश्रम करो।

vii. सम्यक् स्मृति :– अपनी त्रुटियों को बराबर याद रखकर , विवेक और सावधानी से कर्म करने का प्रयास करो।

viii. सम्यक् समाधि– (ध्यान) मन को एकाग्र करने के लिए ध्यान लगाया करो।

अपनी शिक्षाओं में बुद्ध ने शील और नैतिकता पर बहुत अधिक बल दिया। उन्होंने अपने अनुयायियों को मन, वचन और कर्म से पवित्र रहने को कहा। इसके लिए उन्होंने निम्नलिखित दस शील या नैतिक आचरण का पालन करने को कहा। इन्हें हम सदाचार के दस नियम भी कह सकते हैं।

(i) अहिंसा व्रत का पालन करना (अहिंसा)।

(ii) झूठ का परित्याग करना (सत्य)।

(iii)चोरी नहीं करना (अस्तेय)।

(iv) वस्तुओं का संग्रह नहीं करना। (अपरिग्रह)

(v) भोग–विलास से दूर रहना (ब्रह्मचर्य)।

(vi) नृत्य और गान का त्याग करना।

(vii) सुगंधित पदार्थों का त्याग करना।

(viii) असमय भोजन नहीं करना।

(ix) कोमल शैय्या का त्याग करना, और

(x) कामिनी कंचन का त्याग करना।

सदाचार के इन नियमों से प्रथम पाँच महावीर स्वामी द्वारा बताये गये पाँच नियमों के अनुरूप अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य के हैं। बुद्ध के अनुसार इन पाँचों का पालन करना, सभी गृहस्थियों एवं उपासकों के लिए आवश्यक है। इसका पालन करते हुए संसार का त्याग नहीं करने पर भी मनुष्य सन्मार्ग की ओर बढ़ सकता है लेकिन जो व्यक्ति संसार

की मोहमाया छोड़कर भिक्षु जीवन बिताता है, उसके लिए उपर्युक्त नियमों का पालन करना आवश्यक है।

महात्मा बुद्ध ने अपने इन सिद्धान्तों का प्रतिपादन उस युग में प्रचलित रूढ़िवाद का तर्क युक्त खण्डन करते हुए किया और अपने स्वतंत्र दार्शनिक चिन्तन का भी प्रतिपादन किया। बुद्ध तर्क पर बहुत बल देते थे। अन्ध श्रद्धा में उनका विश्वास नहीं था। अतः उन्होंने वेदों की प्रामाणिकता का खण्डन किया। वेदों का खण्डन करने के साथ ही उन्होंने ईश्वर को सृष्टिकर्ता के रूप में नहीं माना । इसी कारण कुछ लोगों ने बुद्ध को नास्तिक भी कहा है। महात्मा बुद्ध आत्मा की अमरता में विश्वास नहीं करते थे। उनके लिए आत्मा शंकास्पद विषय था। अतः आत्मा के बारे में न उन्होंने यह कहा कि आत्मा है और न उन्होंने यह कहा कि आत्मा नहीं है। बुद्ध कर्मवाद के सिद्धान्तों को मानते थे। उनका कहना था कि मनुष्य जैसा कर्म करता है, उसे वैसा ही फल भोगना पड़ता है। मनुष्य का यह लोक और परलोक कर्म पर ही निर्भर है। कर्म फल भोगने के लिए ही मनुष्य का आवागमन होता है। बुद्ध पुनर्जन्म में विश्वास करते थे। वे कहते थे कि मनुष्य के कर्म के अनुसार ही उसका पुनर्जन्म होता है किन्तु बुद्ध का विचार था कि यह पुनर्जन्म आत्मा का नहीं , अहंकार का होता है। जब मनुष्य की तृष्णा व वासनाएँ नष्ट हो जाती हैं तो अहंकार भी नष्ट हो जाता है और मनुष्य पुनर्जन्म से निकलकर निर्वाण प्राप्त करता है।

अहिंसा बौद्ध धर्म का भी मूलमंत्र है। बुद्ध ने बताया था कि प्राणीमात्र को पीड़ा पहुँचाना महापाप है। फिर भी महावीर की भांति अहिंसा पर बुद्ध ने अधिक बल नहीं दिया, बल्कि समय और परिस्थिति को देखते हुए इस सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप प्रदान किया। बुद्ध ने अन्तःकरण की शुद्धि पर भी बहुत बल दिया। उनका कहना था कि तृष्णा अन्तःकरण से पैदा होती है।

बौद्ध धर्म का अन्तिम लक्ष्य निर्वाण (मोक्ष) प्राप्त करना है। निर्वाण शब्द का अर्थ बुझना होता है। अतः महात्मा बुद्ध का कहना था कि मन में पैदा होने वाली तृष्णा या वासना की अग्नि को बुझा देने पर निर्वाण प्राप्त हो सकता है। इस तरह जैन व बौद्ध मत ने वैदिक दर्शन में कालान्तर में शामिल हुई रूढ़ियों को दूर कर उसमें नवीनता को शामिल करने का कार्य किया।

4. इस्लामिक दर्शन

इस्लाम के संस्थापक हजरत मोहम्मद थे। इनका जन्म 570 ई. में मक्का में हुआ था। इनके पिता का नाम अब्दुल्ला और माता का नाम आमिना था । पिता का देहान्त मोहम्मद साहब के जन्म से पूर्व तथा माता का देहान्त इनकी बाल्यावस्था में ही हो गया था। इनका लालन–पालन इनके दादा द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार हलीमा दाई ने किया। मोहम्मद साहब ने 25 वर्ष की आयु में एक विधवा स्त्री खदीजा से विवाह कर लिया। खदीजा की आयु उस समय 40 वर्ष की थी। वह हजरत मोहम्मद साहब की ईमानदारी से बड़ी प्रभावित थी, लेकिन विवाह के बाद हजरत मोहम्मद चिंतन में लीन रहने लगे।

मदीना की मस्ज़िद

इस्लाम के पूर्व अरब की जनता बहुदेववादी थी। वे मूर्तिपूजा में भरोसा करती थी। इन्हीं परिस्थितियों में वहाँ इस्लाम का उदय हुआ। हजरत मोहम्मद को हिरा नामक गुफा में ईश्वरीय ज्ञान हुआ। उन्होंने अरबी जनता को संदेश दिया कि ''अल्लाह (ईश्वर) के सिवाय कोई भी पूजनीय नहीं है और मैं उनका पैगम्बर (दूत) हूँ।'' उन्होंने काबा में रखे हुए 360 देवताओं की पूजा का विरोध किया। इस कारण से मक्कावासी नाराज हो गए और उनका विरोध करने लगे जिसके कारण हजरत मोहम्मद को मक्का छोड़कर मदीना जाना पड़ा । यह महत्वपूर्ण घटना इस्लाम में हिजरत कहलाती है। इसी घटना से ही 622 ई. से इस्लाम का हिजरी संवत् शुरू होता है। मदीना पहुँचने पर हजरत मोहम्मद का सत्कार व स्वागत करने वाले 'अंसार' (मदद करने वाले) कहलाए। यहीं से उन्होंने इस्लाम का प्रचार शुरू किया । मक्कावासी भी धीरे–धीरे उनके विचारों को मानने के लिए तैयार हो गए तथा समस्त अरब जगत में उनके विचारों का प्रचार–प्रसार होने लगा। 632 ई. में उनकी मृत्यु के बाद उनके खलीफाओं ने विशाल साम्राज्य की नींव डाली। हजरत अबूबकर सिद्दीक, हजरत उमर फरूक, हजरत उस्मान गनी, हजरत अली आदि खलीफाओं ने इस मजहब का खूब प्रचार किया।

इस्लाम का दार्शनिक चिन्तन मुसलमानों के पवित्र ग्रंथ कुरान में संग्रहीत है। यह चिन्तन इस प्रकार से है–

1. पाँच मुख्य शिक्षाएँ निम्नानुसार हैं–

   i. मूल मन्त्र (कलमा) : अल्लाह (ईश्वर) के सिवाय कोई पूजनीय नहीं है और मोहम्मद उसके पैगम्बर (दूत) हैं। अर्थात इस्लाम एकेश्वरवाद में विश्वास करता है।

   ii. नमाजः प्रतिदिन पाँच निश्चित समयों पर अल्लाह को सजदा (नमन) करना। ये समय सूर्योदय से पूर्व (फजर), दोपहर (जोहर), तीसरा पहर (असर), सूर्यास्त (मगरिब) तथा रात्रि शयन पूर्व (इशा) है। शुक्रवार को बड़ी सामूहिक नमाज।

   iii. रोजा (व्रत): रमजान के पूरे महिने में प्रतिदिन सूर्योदय से सूर्यास्त तक खाना–पीना नहीं करना।

   iv. जकात (दान) : यदि एक वर्ष में साढ़े सात तोला सोना या 52 तोला चाँदी के बराबर या अधिक धन हो तो इसका 40 वाँ हिस्सा दान में देना।

   v. हज यात्राः जीवन मे कम से कम एक बार मक्का में मजहबी यात्रा पर जाना।

2. इस्लाम की मान्यता है कि मनुष्य की मृत्यु के बाद अल्लाह उसके कर्मों का हिसाब कर उसे जन्नत अथवा दोजख प्रदान करता है।

3. इस्लाम के अनुसार यह जीवन अंतिम है, अर्थात् इस्लाम पुनर्जन्म को नहीं मानता है।

4. इस्लाम मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं करता है।

5. ईसाई दर्शन

ईसाई मजहब व दर्शन के संस्थापक ईसा मसीह थे। इनका जन्म फिलिस्तीन के पहाड़ी भाग बैथेलहम में हुआ था। उनके पिता युसुफ तथा माता मरियम बढ़ई का कार्य करते थे। ईसा मसीह ने अंधविश्वास से घिरे समाज को मुक्त करने की ठान ली। उन्होंने गाँव–गाँव जाकर लोगों को उपदेश दिया कि परमात्मा सबको समान दृष्टि से देखता है। यहूदियों को ईसा मसीह का यह संदेश खटकने लगा। एक बार ईसा मसीह ने जेरूसलम के एक उत्सव में यहूदियों के हिंसात्मक कार्यो का विरोध किया। इससे सारा यहूदी समा उनसे चिढ़ गया। ईसा मसीह के एक शिष्य जुड़ास ने उन्हें धोखे से गिरफ्तार करवा दिया। दण्ड के रूप में उन्हें तीस वर्ष की अवस्था में सूली पर चढ़ा दिया गया। अन्तिम समय में ईसा मसीह ने कहा कि ''हे ईश्वर! इन्हें क्षमा करो क्योंकि ये लोग नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं?

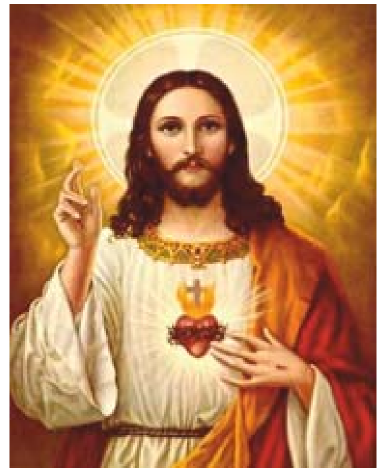

ईसा मसीह

ईसा मसीह के प्रमुख शिष्य संत पॉल व पीटर ने उनके सिद्धान्तों का बहुत प्रचार किया। ईसाई दर्शन के अनुसार ईश्वर एक है तथा उसकी दृष्टि में सभी जीव समान हैं। ईसा मसीह ने मनुष्य की सच्चरित्रता पर बल दिया। उन्होंने कहा कि ''पाप से घृणा करो पापी से नहीं। हमें क्रोध और बदले की भावना छोड़कर क्षमा करना सीखना चाहिए।'' उनका विचार था कि सहनशीलता से आत्मा की उन्नति होती है। उन्होंने लोगों को सत्य अहिंसा, दीन–दुःखियों की सेवा व बलिदान की शिक्षा दी। उनके उपदेश ईसाइयों के पवित्र ग्रंथ बाईबिल में संकलित है।

ईसाई मजहब बाद में दो भागों मे विभाजित हो गया। एक रोमन कैथोलिक एवं दूसरा प्रोटेस्टेंट। जो मूल मजहब पर थे वे कैथोलिक तथा जिन्होंने सुधारों का समर्थन किया वे प्रोटेस्टेंट कहलाये। प्रोटेस्टेंट लोगों ने पोप के राजनैतिक अधिकार, पतित पादरियों और क्षमादान पत्रों की ब्रिक्री का विरोध किया। बाद में मूल ईसाई मजहब में सुधार करने के लिए प्रतिवादात्मक मजहबी सुधार आंदोलन चलाया गया और क्षमादान पत्रों की बिक्री बंद कर दी गई। इस प्रकार ईसाई दार्शनिक चिन्तन के दया, करुणा, सेवा, सच्चरित्रता, सहनशीलता आदि मुख्य तत्त्व हैं।

6. पारसी दर्शन

पारसी धर्म का जन्म फारस (ईरान) में हुआ था। वहाँ के निवासियों का धर्म प्रकृति की पूजा पर आधारित था। इनके मुख्य देवता सूर्य, पृथ्वी, चन्द्रमा आदि थे, परन्तु सूर्य सबसे बड़ा देवता समझा जाता था।

जरथुस्ट्र

फारस का यह प्राकृतिक धर्म कालान्तर में धर्म श्रवौन के रूप में स्वीकार किया गया। इसके संस्थापक जरथुष्ट्र थे। यही श्रवौन धर्म बाद में पारसी धर्म बना। जरथुष्ट्र का जन्म पश्चिमी ईरान के अजरबेजान प्रान्त में हुआ था। उनके पिता का नाम पोमशष्पा और माता का नाम दुरोधा था। वे आरम्भ से ही विचारशील थे। तीस वर्ष की आयु में सबलान पर्वत पर उन्हें ज्ञान की प्राप्ति हुई। अधिकांश विद्वान जरथुष्ट्र का काल 600 ई. पू. मानते हैं।

जरथुष्ट्र द्वारा स्थापित दार्शनिक चिन्तन के अनुसार शरीर नाशवान है तथा आत्मा अमर है। मनुष्य को अपने कर्म के अनुसार सत्य व असत्य का पालन करने से स्वर्ग व नरक की प्राप्ति होती है। इन विचारों से पारसी दर्शन भी वैदिक दर्शन के समान ही दिखाई देता है। पारसी दर्शन के अनुसार संसार में दैवी और दानवी दो प्रकार की शक्तियाँ है। दैवी शक्तियों का प्रतीक अहूरमजदा है। यह महान देवता है जिसने पृथ्वी , मनुष्य व स्वर्ग की रचना की है। अहुरमजदा शक्ति कहती है कि ''ए मनुष्यों! बुरी बात न सोचो, सद्मार्ग न छोड़ो तथा पाप न करो।''

दानवीय शक्तियों का प्रतीक अहरिमन है। अहरिमन शक्ति मनुष्यों को शैतान बनाकर नरक की ओर ले जाती है। इन दोनों शक्तियों में संघर्ष चलता रहता है किन्तु अन्तिम विजय अहुरमजदा की ही होती है। जरथुस्ट्र का दर्शन पलायनवादी नहीं है। उसका मत है कि संसार में रहते हुए सद्कर्म करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है। पारसी दर्शन के अनुसार शरीर के दो भाग है– 1. शारीरिक 2. आध्यात्मिक। मरने के बाद शरीर तो नष्ट हो जाता है किन्तु आध्यात्मिक भाग जीवित रहता है।

पारसी दर्शन के अनुसार यह संसार वायु , जल, अग्नि और पृथ्वी से बना है। पारसी धर्म का पवित्र ग्रंथ अवेस्ता–ए–जेद है। इसमें जरथुष्ट्र की शिक्षाएँ संकलित हैं। कालान्तर में ईरान पर बाहरी आक्रमण होने से पारसियों की बहुत बड़ी संख्या भारत में आकर बस गई। मुम्बई में स्थित पारसी मंदिर वास्तुकला की दृष्टि से आज भी अत्यन्त प्रसिद्ध है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि संसार के विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग धर्म व दर्शनों ने जन्म लिया। सब दर्शनों ने मानव जाति को बुरे कार्यों से बचने और सत्य के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी तथा अपने–अपने क्षेत्र में समाज को एकता के सूत्र में बाँधने का प्रयत्न किया। विश्व के प्रमुख दर्शनों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि सभी का अन्तिम लक्ष्य मानव के जीवन को आध्यात्मिक एवं अच्छा बनाना है। सभी दर्शन उत्तम चरित्र निर्माण के लिए सद्गुणों की आवश्यकता पर बल देते हैं। मानव सेवा, परोपकार, अहिंसा, प्रेम आदि भावनाएँ सभी धर्मों, महजबों में पाई जाती हैं। हमें सभी दर्शनों के प्रति सम्मान की भावना रखनी चाहिए।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. विश्व में वैदिक दर्शन जैन दर्शन, बौद्ध दर्शन, इस्लाम दर्शन ईसाई तथा पारसी दर्शन प्रमुख जीवन दर्शन है।
2. वैदिक दर्शन वेदों पर आधारित है। वेद चार हैं– ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद।
3. जैन धर्म के पाँच मुख्य नियम (महाव्रत) अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह हैं।
4. बौद्ध दर्शन के चार आर्य सत्य हैं – दुःख, दुःख का कारण, दुःख का निवारण व दुःख निवारण का अष्टांगिक मार्ग।
5. इस्लामिक दर्शन के संस्थापक हजरत मोहम्मद साहब थे। इनकी प्रमुख शिक्षाएँ पवित्र कुरान शरीफ में संगृहीत हैं।
6. ईसाई मजहब के संस्थापक ईसा मसीह थे। उनके उपदेश ईसाइयों के पवित्र ग्रंथ बाईबिल में संकलित है।
7. पारसी धर्म के संस्थापक जरथुष्ट्र थे। पारसी धर्म का पवित्र ग्रंथ अवेस्ता–ए–जेद है।
8. जरथुष्ट्र के अनुसार संसार में रहते हुए भी सद्कर्म करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है।
9. जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव, 23वें पार्श्वनाथ तथा 24वें तीर्थंकर महावीर स्वामी थे।
10. वैदिक धर्म वसुधैव कुटुम्बकम में विश्वास करता है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. महावीर स्वामी का जन्म कब हुआ?
   (अ) 699 ई.पू. (ब) 570 ई.पू.
   (स) 675 ई.पू. (द) 599 ई.पू.
2. महात्मा बुद्ध ने प्रथम उपदेश कहाँ दिया था?
   (अ) कपिलवस्तु (ब) सारनाथ
   (स) गया (द) बौद्धगया
3. हिजरी संवत् का प्रारम्भ कब हुआ?
   (अ) 622 ई.पू. (ब) 632 ई.पू.
   (स) 570 ई.पू. (द)566 ई.पू.
4. ईसाई धर्म का पवित्र ग्रंथ कौनसा है?
   (अ) गीता (ब) कुरान
   (स) अवेस्ता–ए–जेद (द) बाईबल

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. पुरुषार्थ कितने हैं? नाम बताइए।
2. वसुधैव कुटुम्बकम् की बात किसमें कही गई है?
3. वैदिक दर्शन के अनुसार सृष्टि का स्रष्टा पालक व संहारक कौन है?
4. जैन धर्म के प्रथम व 24वें तीर्थंकरों का नाम बताइये।
5. पाँच महाव्रत कौन–कौन से हैं?
6. जैन धर्म में अहिंसा की व्याख्या क्या की गई है?
7. महात्मा बुद्ध के बचपन का नाम क्या था?
8. महात्मा बुद्ध ने दुःख का कारण क्या बताया ?
9. बौद्ध धर्म कितने सम्प्रदाय में विभक्त हुआ?
10. मोहम्मद साहब का मक्का से मदीना जाने की घटना को क्या कहते है?
11. हजरत मोहम्मद जन्म कहाँ हुआ?
12. ईसा मसीह के प्रमुख शिष्य कौन थे?
13. बाईबिल के प्राचीन सिद्धान्तों पर चलने वाले लोग क्या कहलाते है?
14. पारसी धर्म के संस्थापक कौन थें?
15. पारसी धर्म में दैवी शक्ति का प्रतीक किसे माना जाता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. वैदिक दर्शन में सहिष्णुता के संदेश को समझाइए।
2. जैन दर्शन के त्रिरत्न की अवधारणा का वर्णन कीजिए।
3. जैन धर्म के प्रमुख तीर्थंकर कौन– कौनसे हैं?
4. बौद्ध दर्शन में चार आर्य सत्य की अवधारणा का वर्णन कीजिए।
5. बौद्ध दर्शन के आत्मवाद को समझाइए।
6. मोहम्मद साहब की शिक्षाओं का अरब वासियों पर क्या प्रभाव पड़ा।
7. पारसी दर्शन के अनुसार देवी और दानवीय शक्तियों का वर्णन कीजिए?

निबन्धात्मक

1. वैदिक दर्शन की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. जैन दर्शन की प्रमुख शिक्षाएँ कौन–कौनसी हैं?
3. बौद्ध दर्शन की शिक्षा का उल्लेख कीजिए।
4. मोहम्मद साहब के जीवन पर प्रकाश डालते हुए इस्लाम की शिक्षाओं का वर्णन कीजिए।
5. ईसा मसीह का परिचय देते हुए ईसाई धर्म दर्शन पर प्रकाश डालिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

1. (द) 2. (द) 3. (अ) 4. (द)